I
नेपाल का सशक्त जन संघर्ष जिंदाबाद !

हमारे पड़ोसी देश नेपाल में सशक्त जनांदोलन चल रहा है । इस आंदोलन की अगुवाई नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) कर रही है । इस आंदोलन ने नेपाल के शासक वर्गों को झकझोर दिया है । भारतीय शासक वर्ग भी इस आंदोलन से परेशान है । एक तरफ, नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नेतृत्व में चलने वाले इस आंदोलन में अधिकाधिक जनता शामिल होती जा रही है और उसका मनोबल ऊंचा होता जा रहा है, वहीं दूसरी तरफ, नेपाली शासक वर्ग के अंदर कलह, विग्रह और फूट तेज होती जा रही है। नेपाल के राजा वीरेन्द्र की समूचे परिवार सहित हत्या राज परिवार के भीतर चलने वाले षड़यंत्र का हिस्सा है, जो यह दिखता है कि नेपाल के अंदर राजशाही के दिन इने-गिने हैं। इसके अतिरिक्त राजशाही द्वारा निर्देशित बहुदलीय प्रणाली वाला "जनतंत्र" भी संकटग्रस्त है । राजनीतिक अस्थिरता बरकरार ही नहीं, बढ़ती जा रही है । शासक वर्गों में फूट और विग्रह तथा जनता के बढ़ते हुए जनांदोलन जिनमें सशस्त्र संघर्ष एक अहम हिस्सा है, नेपाल की मौजूदा राजनीतिक स्थिति की विशेषता है । यह दुनिया के कम्युनिस्टों और मेहनतकश लोगों की दृष्टि से स्वागत योग्य स्थिति है ।.

नेपाल की जनता के व्यापक होते जा रहे आंदोलन और नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की बढ़ती हुई साख खुद इस पार्टी के भीतर चले संशोधनवाद विरोधी विचारधारात्मक संघर्ष में विजय हासिल करने के बाद का नतीजा है । नेपाली समाज में तीखे वर्गीय अंतरविरोध और भयंकर सामंती उत्पीड़न के विरूद्ध नेपाल की मेहनतकश जनता बार-बार उठ खड़ी होती रही है, लेकिन नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर मौजूद संशोधनवाद के कारण भी इन उभारों को क्रांतिकारी परिप्रेक्ष्य नहीं दिया जा सका था । लेकिन 90 के दशक के शुरूआत से नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर विचारधारात्मक संघर्ष में संशोधनवाद को परास्त करने के बाद नेपाल की मेहनतकश अवाम के संघर्षों को एक नई ऊंचाई तक ले जाने में और उसे क्रांतिकारी परिप्रेक्ष्य देने में वहां के कम्युनिस्ट आगे बढ़े हैं । उन्होंने व्यापक जनता का समर्थन हासिल करने में कामयाबी पायी है ।

नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) को यह बखूबी एहसास है कि जब तक वे नेपाल के अलग-अलग क्षेत्रों में जनउभार और जनसंघर्ष नहीं विकसित कर लेते तब तक वे सैनिक तौर पर आधार क्षेत्रों को टिकाये रखने में समर्थ नहीं हो सकते । इसी के साथ ही उनकी यह स्पष्ट मान्यता है कि क्रांति की सफलता के लिए एक खास अंतर्राष्ट्रीय स्थिति की जरूरत है । वे इसे अच्छी तरह से समझते हैं कि नेपाल भू-आवेष्ठित (लैण्ड-लॉक्ड) होने और भारतीय विस्तारवाद का शिकार होने तथा उससे तीन तरफ से घिरे होने के कारण जब तक भारत में अस्थिरता न हो और नेपाल के जनयुद्ध के प्रति भारत में एक शक्तिशाली

जनाधार न हो और भारतीय सत्ताधारी वर्ग के बीच तरह-तरह के अंतरविरोध न हों तब तक नेपाल के अंदर सत्ता पर कब्जा करना अत्यन्त कठिन होगा, यदि कब्जा हो भी जाय तो उसे टिकाये रखना असम्भव होगा । वे भारतीय शासक वर्ग की क्षेत्रीय दादागिरी की आकांक्षा और नेपाल की अर्थव्यवस्था में भारतीय पूंजीपति व व्यापारी वर्ग की मजबूत जकड़न के विरूद्ध नेपाली व्यापक जनसमुदाय को गोलबंद करने की कोशिश कर रहे हैं और इसी के साथ ही भारत के क्रांतिकारी कम्युनिस्ट आंदोलन के साथ एकजुटता व सहयोग पर जोर दे रहे है ।

वे नव जनवादी क्रांति की मंजिल नेपाल के लिए निर्धारित करते हुए नेपाल की विशिष्टताओं और विशेष भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखकर अपनी रणनीति और रणकौशल तय कर रहे हैं । उन्होंने सामंतवाद विरोधी संघर्षों में जहां कृषि क्रांति में "जमीन जोतने वाले की हो" का नारा दिया है, वहीं पहाड़ी इलाकों में (जो नेपाल का बड़ा क्षेत्र है) जमींदारों व सूदखोरों की जमीन जब्त करके उसे गरीब व भूमिहीन किसानों में वितरित न करके सामूहिक खेती को लागू करने का काम किया है । उनकी यह समझ है कि सिर्फ तराई क्षेत्र में ही जमींदारों की जमीन जब्त करके उसे गरीब व भूमिहीन किसानों के बीच वितारित करने की स्थिति है । पहाड़ों में यह स्थिति नहीं है । इस मामले में वे अपने देश की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए क्रांतिकारी रणकौशल अख्तियार कर रहे हैं ।

इसी प्रकार, नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) ने राजा वीरेन्द्र की परिवार सहित हत्या के बाद अपना हमला राजा ज्ञानेन्द्र और तत्कालीन प्रधानमंत्री गिरजा प्रसाद कोइराला को बनाया और बाकी शक्तियों को व्यापक जनमोर्चे में शामिल होने का आह्वान किया । यहां यह ध्यान में रखने की बात है कि जब, शत्रु खेमे में हड़बड़ी और फूट हो तथा मध्यवर्त्ती शक्तियों में ढुलमुलपन अत्याधिक हो तो मध्यवर्त्ती शक्तियों के ढुलमुलपन पर प्रहार केन्द्रित करना क्रांति के हित में होता है । क्योंकि जब तक शासक वर्गों के साथ मध्यवर्त्ती शक्तियों के संश्रय को समाप्त नहीं किया जाता तब तक सर्वहारावर्ग की पार्टी शासक वर्गों की भीतर कलह को फूट तक ले जाने में कामयाब नहीं हो सकती और मध्यवर्त्ती शक्तियों को अपने पक्ष में नहीं कर सकती । मध्यवर्त्ती शक्तियों के ढुलमुलपन के विरूद्ध नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) किस तरह प्रहार करती है, और उनके नेपाल के शासक वर्ग के साथ संश्रय को तोड़ने में कामयाब होती है या नहीं, इससे क्रांति के विजय का प्रश्न जुड़ा हुआ है ।

यह सम्भव है कि नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नेतृत्व में चलने वाले सशक्त और व्यापक जनआंदोलन के दबाव के समक्ष संवैधानिक राजशाही समाप्त हो जाय और पूंजीवादी जनतंत्र कायम हो जाय । यह भी सम्भव है कि इस पूंजीवादी जनतंत्र के कायम हो जाने के बाद भूमि-सुधार के कार्यक्रम नेपाली शासक वर्ग आधे-अधूरे ढंग से लागू करें तब नेपाली की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) अपने को सर्वहारा वर्ग के हिरावल की भूमिका में रखकर अपने भविष्य को पूंजीवादी क्रांति के इस या उस किस्म की सफलता से न जोड़कर अपने समाजवादी लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने की ओर जायेगी, यह उम्मीद की जानी चाहिए।

नेपाली समाज अत्यन्त पिछड़ा हुआ है और वहां निर्धनता अत्याधिक है । कृषि मुख्य कारोबार है तथा वह सामंती बंधनों में जकड़ी हुई है । उद्योग धंधे न के बराबर हैं। जो हैं भी उन पर भारतीय पूंजीपतियों का नियंत्रण है । आज की साम्राज्यवादी विश्व-व्यवस्था में

नेपाल विभिन्न देशों के उत्पादों की मण्डी बना हुआ है । भारतीय विस्तारवाद के विरूद्ध संघर्ष नेपाल के जनमुक्ति संघर्ष का अहम हिस्सा है । अतः नेपाल के जनमुक्ति संघर्ष को भारतीय शासक वर्गों के हस्तक्षेप और दमन का भी सामना करना पड़ेगा । भारतीय सर्वहारा वर्ग के संगठनों द्वारा व्यापक भारतीय मेहनतकश जनता को जिस हद तक भारतीय शासक वर्ग के विरूद्ध संघर्ष में गोलबंद और संगठित किया जा सकेगा, उस हद तक नेपाल की क्रांति में यह महत्वपूर्ण योगदान होगा । भारतीय शासक वर्ग ने सिर्फ भारतीय कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन के खतरे से भयभीत है बल्कि वह नेपाल के शासक वर्ग के साथ साठगांठ करके नेपाल के क्रांतिकारी आंदोलन को कुचलने की साजिश कर रहा है । वह नेपाल के क्रांतिकारी आन्दोलन को बदनाम करने की तिकड़में रोज करता है । नेपाल से लगी हुई सीमा पर चौकसी बढ़ा रहा है तथा वह छिपे तौर पर ऐसी कार्रवाइयां भी अंजाम दे सकता है जो कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों को बदनाम करती हों ।

भारतीय सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधियों यानि कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों का यह अंतराष्ट्रीय कर्तव्य बनाता है कि वे कुत्सा प्रचार का पर्दाफाश करें और इसके विस्तारवादी नीतियों तथा नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) को नेपाल के शासकों द्वारा कुचलने के प्रयासों में इसकी घृणित भूमिका को बेनकाब करें । ❑❑❑

II

11 सितम्बर के बाद

साम्राज्यवादी आक्रमण का विरोध करो !

वर्ल्ड ट्रेड सेंटर और पैंटागन पर 11 सितम्बर के आंतकवादी हमलों के पश्चात जो नयी परिस्थिति पैदा हुई है वह पुरानी का विकास है । पहले से मौजूद अंतरविरोध इस दौरान और तीखे हुए हैं और इन्होंने विभिन्न वर्गों का मजबूर किया है कि वे अपने वर्ग हितों के अनुरूप सुस्पष्ट अवस्थितियां ग्रहण करें । ऐसे में सर्वहारा की वर्ग-सचेत टुकड़ियों का यह दायित्व है कि वे नयी परिस्थिति में विभिन्न वर्गों के व्यवहार का अपने वर्ग-हित में विश्लेषण करें और तदानुरूप अपने रणकौशल तय करें ।

आज, अमेरिकी शासक वर्ग के साथ सहानुभूति जताने एवं ऊपरी एकता प्रदर्शित करने के बावजूद दुनिया के अन्य साम्राज्यवादी शासक इस नयी परिस्थिति का वह विकास चाहते है जिसमें अमेरिकी प्रभुत्व का क्षरण हो । ब्रिटेन के अलावा कोई भी अमेरिकी संश्रय में आज वैसे शामिल नहीं है जैसे कि खाड़ी युद्ध के समय था । इस बार अमेरिका न तो संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के मार्फत कोई बड़ा संश्रय कायम कर पाया है और न ही यह लड़ाई नाटो के झंडे तले लड़ी जा रही है । नाटो के मंच से 'एक पर हमला, सभी पर हमला' मार्का जो बयान आ रहे है वे मात्र लोक रंजक है और मीडिया के उपयोग के लिये हैं । पश्चिमी यूरोप के साम्राज्यवादी इस लड़ाई में अमेरिका के साथ नहीं हैं, वे इस ताक में बैठे हैं कि तालिबान की शिकस्त के बाद अफगानिस्तान में जो हुकूमत कायम

हो वह उनके अनुकूल हो । वे इस बात के लिये भी तैयारियां कर रहे है कि यदि लड़ाई के बाद कोई एकीकृत देशी हुकूमत कायम न हो सके और प्रत्यक्ष सैनिक मौजूदगी अनिवार्य हो तो वे आखिरी वक्त पर अफगानिस्तान में उपस्थित हों । अमेरिका के समानांतर अपनी गोटी बैठाने के प्रयासों में रूस सबसे आगे है ।

इस युद्ध की समाप्ति होते-होते यदि अमेरिकी प्रभुत्व का क्षरण हो, तब भी दक्षिण व मध्य एशिया के लिये इसके परिणाम बुरे ही होंगे । इससे यहां के देशों की संप्रभुता का ह्रास हो रहा है । यह नयी परिस्थिति इन देशों के मेहनतकशों के लिये तो बुरी व प्रतिकूल है ही, इन देशो के शासक वर्गों के लिये भी दिक्कतलब है । ऐसे में कुछ, मसलन ईरान-इराक इस युद्ध के प्रत्यक्ष विरोधी हैं तो कईयों का द्वन्द मसलन पाकिस्तान, उनकी कसमसाहट में अभिव्यक्त हो रहा है। हालांकि यह नयी परिस्थिति भारतीय शासक वर्ग के लिये भी दिक्कततलब है लेकिन कश्मीर की लालच उसे अमेरिका की चमचागीरी की हद तक ले जा रही है । कश्मीर की लालच ने उसके प्रतिनिधियों को अति संकीर्ण बना दिया है और इस मौके पर वे अपने दूरगामी वर्ग हितों के अनुरूप व्यवहार नहीं कर रहे हैं । कश्मीर के मामले में इस वर्ग की नीति किसी तीसरे की मध्यस्ता की विरोधी रही है, लेकिन आज ये अमेरिका से कश्मीर मामले में परोक्ष मध्यस्थता करवा रहे हैं ।

इस युद्ध की समाप्ति होते-होते दक्षिण एशिया के मानचित्र में एक बड़ा परिवर्तन आ चुका होगा । यहां अमेरिका की सैनिक उपस्थिति स्थायी हो चुकी होगी । बहुत मुमकिन है कि कई देशो में वह अघोषित रूप में अपने स्थायी सैनिक अड्डे (Millitary Bases) स्थापित कर ले जाये । इलाके में अमेरिकी सामरिक उपस्थिति यहां की राजनीति और अर्थनीति को निरंतर प्रभावित करेगी । दक्षिण एशिया के मजदूरों व अन्य मेहनत कशों के जीवन की कठिनाइयां बढ़ेंगी, उनका वर्ग-उत्पीड़न बढ़ेगा ।

इस क्षेत्र में अमेरिकी साम्राज्यवाद की सामरिक घुसपैठ के साथ ही जो बुरे परिणाम अभी से सामने आने लगे हैं इन में सर्वप्रथम है धार्मिक कठमुल्लावाद का विकास। सुदूर नाइजीरिया से लेकर भारत-पाकिस्तान में धार्मिक-कठमुल्लावादियों के लिये एक बेहतरीन परिस्थिति तैयार हुई है, जिसमें वे पूर्ण सक्रियता दिख रहे है हैं । ऐसे में इन समाजों में (Secularism) और जनवाद (Democracy) का ह्रास हो रहा है । मेहनतकश वर्गों के सदस्यों के बीच धार्मिक अन्तरविरोध, उनके बीच की दूरियों को बढ़ायेगा और वर्गीय एकता कायम करने में आड़े आयेगा । इस मामले में स्थिति बहुत साफ है कि हालांकि अमेरिकन साम्राज्यवाद ऊपरी तौर पर इस्लामिक कट्टरपंथ का विरोध कर रहा है, लेकिन फिर भी, तालिबान की शिकस्त के बाद भी, क्षेत्र में उसकी मौजूदगी मात्र से इस्लामिक कट्टरपंथ को बढ़ावा मिलेगा । वैसे वह अभी से तालिबान -विरोधी इस्मामिक कट्टरपंथियों से हाथ मिला रहा है और जनवादी शक्तियों की खिलाफत कर रहा है । अगर विशिष्ट भारत की बात की जाये तो यहां तो हिन्दू कट्टरपंथियों के हौसले का ग्राफ अमेरिकन साम्राज्यवाद की घुसपैठ के साथ-साथ ऊपर उठ रहा है । ऐसे में धर्म-निर्पेक्षता और जनवाद के लिये संघर्ष कम्युनिस्टों के लिये अहम कार्यभार बन जाते है । अपने कार्यक्रमों व प्रचार में किसी भी प्रकार की फिरका-परस्ती को हल्की सी रियायत या ढील घातक होगी । हमें हर कीमत पर धर्म - निर्पेक्षता के लिये संघर्ष करना है ।

नयी स्थिति में इजराइली शासक वर्ग के प्रतिक्रियावाद को जबरदस्त शह मिल रही है । वह पूर्णतः आक्रमण पर है । उसके बन्दूक धारी चुन-चुन कर फिलिस्तीनियों और उनके नेताओं को मार रहे हैं । फिलिस्तीन का मुक्ति संघर्ष एक बहुत ही कठिन दौर में प्रवेश कर चुका है । ऊपर से दुर्भाग्य यह कि यासर अराफात एवं अन्य अभिजात फिलिस्तीनी निर्णायक संघर्ष छेड़ने के बजाये समझौतापरस्ती की मानसिकता में है । इजाराइली शासक वर्ग उनकी इस कमजोरी को ताड़ चुका है और फिलिस्तीनी मुक्ति संघर्ष को पीछे धकेलने का कोई मौका नहीं छोड़ रहा है । मध्य पूर्व में अमेरिका की तात्कालिक दिलचस्पी इसी में है कि इजराइल-फिलिस्तीन झगड़ा न बढ़े क्यों कि ऐसा होने पर मुसलमान अमेरिका विरोधी हो उठते हैं, परन्तु उसका लठैत (इजराइल) उसके पूर्ण नियंत्रण में नहीं है । वह पहले अपने हित देख रहा है और बाद में अमेरिका के, इसीलिये बीच-बीच में अमेरिका को उसे धुड़कियां भी देनी पड़ रहीं हैं ।

नयी परिस्थिति में अमेरिकी शासक वर्ग अमेरिकी मजदूर वर्ग व अन्य मेहनतकशों पर भी आक्रमण कर रहा है । मौके का फायदा उठा कर, खौफ और डर का माहौल पैदा करके, वह अपनी वर्ग - सत्ता को मजबूत करने के लिये अमेरिकी जनता से जनवाद छीन रहा है । वहां राजसत्ता का गुप्तचर ढांचा मजबूत किया जा रहा है, नागरिकों पर निगरानी बढ़ायी जा रही है, नागरिक स्वतंत्रताएं घटायी जा रही है । अमेरिकी शासक वर्ग के हाथ एक ऐसा अवसर लगा है जिसमें वह अपनी राजसत्ता के ढांचे को और परिष्कृत व मजबूत बना सकता है । वह इस अवसर का पूरा-पूरा लाभ उठा रहा है और अमेरिकी मेहनतकशो के वर्ग-उत्पीड़न को बढ़ा रहा है । वैसे आर्थिक अस्थिरता और मंदी की स्थितियों में मजदूर वर्ग को वेतन कटौतियों एवं छंटनी का सामना करना ही पड़ रहा है । वर्तमान अफगान अभियान न केवल ओसामा-बिन-लादेन व तालिबान के खिलाफ है, वह अमेरिकी जनता के खिलाफ भी है ।

भारत में भी, भारतीय शासक वर्ग ने मौके का फायदा उठा कर, आतंकवाद का हौवा खड़ा कर नागरिक निगरानी बढ़ायी है, गुप्तचर ढांचे को मजबूत किया है और जनवादी संगठनों का दमन किया है । दूसरी और उसके राजनीतिज्ञ पुनः हिन्दु-मुसलमान विवाद पर आधारित राजनीति कर रहे हैं और समाज में फिरकापरस्ती बढ़ा रहे हैं । 'सिमी' पर प्रतिबंध बाद वाली प्रक्रिया की अभिव्यक्ति है, जब कि युद्ध विरोधी विद्यार्थियों / नागरिकों का दमन पहली वाली की । ये दोनों प्रक्रियाएं एक दूसरे में गुथी हुई है और इन्हें एक दूसरे से जुदा करना मुश्किल है क्यों कि इनका स्रोत एक ही है, भारतीय पूंजीपति वर्ग का प्रतिक्रियावाद। ऐसी हालत में भारत के कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों को जनता के मध्य अमेरिकी साम्राज्यवाद और देशी प्रतिक्रियावाद (विशेष तौर पर साम्प्रदायिकता) के बीच का रिश्ता बेनकाब करना पड़ेगा और साम्राज्यवादी युद्ध की पुरजोर खिलाफत करनी होगी । अपनी खिलाफत में हमें अपने को मानवतावादियों और संशोधनवादियों से स्पष्टतः अलग रखना है और जनता के बीच उनकी व्यवस्था परस्ती व ढुल-मुलपन को उजागर करना है । ऐसा हम तभी कर सकते हैं जब हम जनता के बीच यह बात बहुत साफ तौर पर रखें कि 'दुनिया में आतंकवाद को खत्म करने के लिये साम्राज्यवाद को खत्म करना निहायत जरूरी है, क्यों कि अमेरिकी राजसत्ता ही आतंकवाद का सबसे परिष्कृत और मजबूत संगठन है ।' यह बात हमें

मनवतावादियों और संशोधनवादियों के युद्ध–विरोध से अलग कर देती है। चूंकि उन्हें अमरीकी साम्राज्यवादियों से रिश्ते रखने हैं, इसलिए वे इस बात को स्थापित नहीं कर सकते। ऐसी साफ बात केवल हम ही कर सकते हैं।

यह हमारे लिये बड़ी खुशी की बात है कि दुनिया भर में जगह–जगह युद्ध का विरोध हो रहा है। हमें हर सम्भव तरीके से इस विरोध का समर्थन करने और इसे सशक्त बनाने के लिये काम करना है। तथापि हमें इस सत्य को भी स्वीकारना होगा कि यह विरोध एकीकृत नहीं है और इसकी जमीन भी अलग–अलग है –– कहीं पर इसकी इस्लाम है,तो कहीं बुर्जुआ मानवतावाद। हमें इस विरोध की जमीन को बदलने के लिए धैर्य से कार्य करने की जरूरत है। हमारे लिये साम्राज्यवाद–विरोधी, धर्मनिरपेक्ष–जनवाद ही सही जमीन है। युद्ध के खिलाफ जनता में जो अक्रोश पैदा हो रहा है, वह हमें जनता के बीच अपने काम को और तेज करने व बढ़ाने के सुवअवसर प्रदान कर रहा है। हमें इन्हें हाथ से नहीं जाने देना चाहिए, साम्राज्यवादियों और देशी पूंजीपतियों के चरित्र को बेपर्दा करने का यह बहुत अच्छा मौका है।